अध्याय द्वितीय

प्रेमचंद पूर्व उपन्यासों में अभिव्यक्त नैतिकता का स्वरूप।

अ) प्रेमचंद पूर्व उपन्यासों में अभिव्यक्त नैतिकता का स्वरूप।

निष्कर्ष

ब) प्रेमचंद युगीन उपन्यासों में अभिव्यक्त नैतिकता का स्वरूप।

निष्कर्ष।

अध्याय तीसरा

जैनेंद्र पूर्व उपन्यासों में अभिव्यक्त नैतिकता का स्वरूप।

अ) प्रेमचंद पूर्व उपन्यासों मे नैतिकता का स्वरूप :

प्रेमचंद्रपूर्व युग -

इस युग में उपन्यास-विधा का प्रारंभ हो जाता है। इस काल में श्रेष्ठ उपन्यास प्राप्त नहीं होते हैं। यह स्वाभाविक ही माना जाएगा। उपन्यास विधा को स्थापित और जनप्रिय करने का महत्वपूर्ण कार्य इस काल के उपन्यासकारों ने किया है।

इस काल के उपन्यासों को सामाजिक, ऐतिहासिक, तिलस्मी-ऐयारी-जासूसी आदि विभिन्न वर्गों में विभाजित किया गया है। तथापि यह वर्गीकरण उतना उपयुक्त सिध्द नहीं होता है। इस काल के साहित्यिक बहुमुखी प्रतिभा के व्यक्ति थे और सामान्यत: प्रत्येक साहित्यिक साहित्य की प्रत्येक विधा पर अपना हाथ आजमा लेता था। ऐसी स्थिति में जिन्होंने उपन्यास-विधा को प्रधान रूप से अपनाया, उनका विशेष महत्व माना जाएगा। उन्हीं को प्राधान्य देकर विवेचन करना उपयुक्त होगा।

इस दृष्टि से किशोरीलाल गोस्वामी, गोपालराम गहमरी तथा देवकीनंदन खत्री जी का विशेष महत्व है। प्रथम हम उन्हींका परिचय प्राप्त करेंगे।

किशोरीलाल गोस्वामी -

किशोरीलाल गोस्वामी मुख्यतया उपन्यासकार थे। ये उपन्यास को ' प्रेम का विज्ञान ' मानते थे। गोस्वामी जी ने सामाजिक, ऐतिहासिक, जासूसी, तिलस्मी-ऐयारी आदि विभिन्न प्रकार के उपन्यास लिखने का प्रयास किया है। इन्होंने उपन्यास का प्रधान उद्देश्य प्रेम-विज्ञान का प्रचार माना था। फलत: उनके अधिकांश उपन्यासों में प्रेम के सम-विषम रूपों का चित्रण पाया जाता है। गोस्वामीजी की सबसे बडी कमजोरी यह हैं कि उन्हें प्राय: विकृत और अनैतिक प्रेम के चित्रण में मजा आता था। इसी कारण उनके उपन्यासों मे वेश्याओं के कृत्रिम प्रेमाभिनय, साली-बहनोई का अवैध प्रेम, व्यभिचार, भ्रूणहत्या, देवदासियों का घृणित जीवन, कुटनियों की करामतें, सौतिया डाह, आदि का बडा चटक चित्रण किया गया है।

आश्चर्य तो यह देखकर होता है कि एक तरफ लेखक हिन्दू धर्म को गौरव और नारी मर्यादा की रक्षा के लिए बडे-बडे उपदेश देता है और दूसरी ओर पतित नारियों के रूप-यौवन और हाव-भाव का रंगीन वर्णन करने में अजीब आनंद का अनुभव करता है। ' माधवी-माधव ' या ' मदन-मोहिनी, ' ' सौतिया डाह,' ' लीलावती,' ' त्रिवेणी,' ' कुलटा,' आदि उपन्यासों में यह प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है।

जब कभी लेखक का आदर्शवाद प्रभावी बन जाता है तब लेखक या तो उसमें परिवर्तन ला देता है, अथवा स्वयं ही उनका दंड-विधाता बनकर उनके पापों का उन्हें दंड दे देता हैं। सज्जन पात्र किसी-न-किसी प्रकार पुरस्कृत होते हैं।

गोस्वामी जी के उपन्यासों में ऐतिहासिक उपन्यासों की संख्या भी अधिक है। अपने ऐतिहासिक उपन्यासों के विषय में उन्होंने स्वयं ही कहा है, " हमने अपने बनाये उपन्यासों में ऐतिहासिक घटना को गौण और अपनी कल्पना

को मुख्य रखा है और कहीं-कहीं ऐतिहासिक घटना को दूर से ही नमस्कार किया है।"[1] फलत: इनके उपन्यास सस्ते ऐतिहासिक रोमान्स की कोटि में ही आते हैं। हिंदुता का गौरव और जात्याभिमान इन उपन्यासों का प्रमुख प्रतिपाद्य है।

'तारा,'' आदर्श बाला,'' हीराबाई ' या ' बेहयाई का बोरका ' आदि इनके ऐतिहासिक उपन्यास हैं।

अपनी सीमाओं के बावजूद भी गोस्वामी जी का कार्य स्मरणीय है।

गोपालराम गहमरी -

गोपालराम गहमरीजी बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यिक माने जा सकते है। कवि, अनुवादक, उपन्यासकार, निबंध-लेखक, कहानीकार आदि कई रूपों में उनकी प्रतिभा व्यक्त हुई है। इन्हें सर्वाधिक ख्याति जासूसी उपन्यासों के कारण ही मिली। ' जासूस ' नामक मासिक पत्रिका भी निकालते थे। अत: अनिवार्यत: प्रतिमास एक जासूसी उपन्यास लिखना ही पडता था। इनके जासूसी उपन्यासों की संख्या २०० से भी ऊपर हैं। इनके उपन्यासों के नाम गिनाने से कोई लाभ नहीं होगा।

ध्यानपूर्वक देखने से यह ज्ञात होता है कि, कुल ५ या ६ घटना-प्रकार हैं जिनपर प्राय: सभी उपन्यासों की कथा आधारित है। उपन्यास का प्रारंभ किसी सनसनीखेज घटना से होता है। प्राय: खुन, डकैती, चोरी, ठगी आदि की घटनाओं को लेकर उपन्यासों का ढाँचा निर्माण किया जाता है। प्रसिद्ध जासूस रहस्य को सुलझाने में प्रवृत्त होता है। उलझाव से भरी अनेकों घटनाओं के बाद जासूस के धैर्य, उत्साह और बुध्दिबल से रहस्य सुलझा जाता है और दुष्ट पात्रों को दंड मिल जाता है।

---

१. डॉ. धीरेंद्र वर्मा, ' हिन्दी साहित्य कोश भाग २,' (नामवाचक शब्दावली), पृ. ८६, वाराणसी (बनारस), सं. २०२०, प्रथम संस्करण.।

इन उपन्यासों का लक्ष्य मनोरंजन होता है। ये तिलस्मी-ऐयारी उपन्यासों के निकट आते है। इनमें अंतर यही है कि जासूसी उपन्यासों में अमानवी अथवा अतिमानवी तत्वों का आश्रय नहीं लिया जाता है। अंग्रेजी साहित्य में जासूसी उपन्यासों की स्वस्थ परंपरा है। `कॉनन डायल` का नाम तो विश्वविख्यात ही है। गहमरी जी को हिंदी का `कॉनन डायल` भी कहा जाता है। हिंदी में जासूसी उपन्यासों की और उपेक्षा की दृष्टि से ही देखा गया, फलत: कोई श्रेष्ठ व्यक्तित्व निर्माण नहीं हो गया। हम गहमरी से चलकर गहमरी तक ही पहुँच जाते हैं। गहमरी जासूसी उपन्यासों के क्षेत्र में अन्यतम ही हैं। `` आपके साहित्यिक वैशिष्टय का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष आपकी वक्रतापूर्ण गद्य-शैली है। जासूसी के चक्कर में गहमरी का निबंधकार रूप पूर्ण विकसित नहीं हो सका, अन्यथा हिन्दी को एक बडा शैलीकार प्राप्त हुआ होता। सन १९४६ ई. मे आपकी मृत्यु हो गयी।``[१]

<u>देवकीनंदन खत्री</u> -

हिन्दी साहित्य में तिलस्मी-ऐयारी उपन्यासों के प्रवर्तक खत्री जी ही माने जाते हैं। इनकी कीर्ति के आधार स्तंभ `चंद्रकांता` तथा `चंद्रकांता-संतति` ये उपन्यास माने जाते हैं। इसी कोटि के उर्दू उपन्यासों से वे इस माने में पृथक हैं कि जहाँ उर्दू के उपन्यास वासना परक हैं, ये उपन्यास वासनाओं से परे हैं। संस्कृत के निति-साहित्य में वर्णित `गुढ पुरूष` और लोक-जीवन में प्रचलित कहानियों के `चतुर-चोरों` के मेल से इन्होंने अपने ऐयारों का निर्माण किया है।

इन `तिलस्मी-ऐयारी` उपन्यासों में कुछ सामान्य कथानक रूढियों का पालन किया जाता है। कथा का प्रारंभ किसी कुलीन राजकुमार और राजकुमारी के सम प्रेम से होता है। उनके प्रेम में क्रूर, धूर्त तथा हींसक प्रतिनायक तथा सुंदरी

---
१. धीरेंद्र वर्मा, `हिन्दी साहित्य कोश भाग-२,` पृष्ठ १३७, वाराणसी (बनारस), सं. २०२०, प्रथम संस्करण।

किन्तु निष्ठुर प्रतिनायिका उनके प्रेम में व्याघात निर्माण करते हैं । इनके फेरे में पडकर नायक और नायिका प्राय: किसी तिलस्म में फँस जाते हैं, जिसकी रचना बडी ही जटिल होती है । इन तिलस्मों को तोडने का नुस्खा ` रक्तग्रंथ ` नामक पोथी में लिखा रहता है । अनेकानेक बाधाओं को पार करता हुआ नायक अंत में तिलस्म तोडने में सफल हो जाता है । इस काम में उसे अपने ` ऐयारो ` तथा ` ऐयाराओं ` से सहायता प्राप्त होती हैं । इन ऐयाराओं की - तथा राजकुमारी की सखियों की प्राप्ति प्रतिनायक के साथियों और ऐयारों को होती है ।

खत्रीजी के ये उपन्यास अत्यंत जनप्रिय सिध्द हुए । हिंदी का पाठक वर्ग बढाने का बहुत बडा श्रेय उन्हें प्राप्त हैं । बहुत-से व्यक्तियों ने ` चंद्रकांता ` पढने के लिए हिंदी सीखी ।

सामान्यत: देवकीनंदन खत्री जी को कल्पनालोक में विचरण करनेवाला उपन्यासकार माना जाता है, जो उतना सत्य नहीं है । पतन और ह्रास की ओर ले जानेवाली प्रवृत्तियों के बीच देवकीनंदन खत्री ने मानवी व्यवहार का एक आदर्श रूप प्रस्तुत किया जो भारत के भावी जीवन की ओर संकेत करनेवाला था ।

उनके साहित्य में अनेक स्थलोंपर प्रेम, वैवाहिक जीवन, बहुविवाह, देशी रियासतों मे अव्यवस्था और लूट खसोट, अधोगति, ज्योतिष में अंधविश्वास, धार्मिक जीवन की विडंबनाओं और कुरूपताओं, उंचनीयच की भावना, सांप्रदायिक विद्वेष आदि नवोदित भारतेंदुयुगीन समस्याओं की ओर अप्रत्यक्ष प्रगतिशील संकेत मिलते हैं । उनकी सामाजिक चेतना की आत्मा मंद मात्र पड गयी है ।

इनके उपन्यास नैतिक दृष्टिकोणसे सर्वथा हीन नहीं है । नायक का निष्ठावान, भाग्यवादी, वीर और न्यायप्रिय होना, ऐयारों का वीर, स्वामिभक्त, अहिंसक और बातका धनी होना, प्रेम-चित्रों में वासना का अभाव

होना, नायिकाओं में प्रेम की अनन्यताका दिखाया जाना और अन्तत: क्रूर-कुविचारी पात्रों का सर्वनाश दिखाना आदि ऐसे तत्व इनमें मिलते हैं, जिनसे एक तो भारतीय नैतिक आदर्शवादी दृष्टिकोण की रक्षा हुई है, दूसरे सामान्य जातीय चरित्रों की स्थूल रेखाओं का अंकन भी हो गया है। लेखक जिस ढंग से घटनाओं को बिखेर देता है, उलझा देता है और फिर समेट लेता है, उससे उसकी उर्वर कल्पना शक्ति और अद्भुत स्मरण शक्ति का अनुमान लगाया जा सकता है।

" पहली अगस्त सन् १९१३ ई. को आपकी मृत्यु हो गयी।"[१]

<u>अनूदित उपन्यास</u> :

इस काल में उपन्यासों के अनुवाद भी बहुत बडी मात्रा में हुए। बंगला और अंग्रेजी से अधिक मात्रा में, उस में भी बंगला से अधिक मात्रा में अनुवाद हुए है।

बंकीमचंद्र चटर्जी, रमेशचंद्र दत्त, तारकानाथ गंगुली, दामोदर मुकर्जी, रवींद्रनाथ ठाकुर आदि के उपन्यासों का विशेष रूप में अनुवाद किया गया। कुछ अपवादों को छोडकर अधिकांश अनुवाद कौतुक, रहस्य, रोमांचप्रधान उपन्यासों के ही हुए हैं। उर्दू से भी अनुवाद हुए हैं, उन में भी उपर्युक्त प्रवृत्ति ही दिखायी देती है।

<u>अन्य उपन्यासकार</u> :

जैसा कि प्रारंभ में ही बताया गया है कि इस काल में अधिकांश लेखक बहुमुखी प्रतिभा के थे। अत: अनेकों लेखकों ने थोडे बहुत उपन्यास जरूर लिखे हैं।

---

१. डॉ. धीरेंद्र वर्मा, " हिन्दी साहित्य कोश भाग-२," पृष्ठ २४६, वाराणसी (बनारस), सं.२०२०, प्रथम संस्करण.।

सामान्यरूप से इन लेखकों के उपन्यास सामाजिक कोटि के हैं। जिनका लक्ष्य सामाजिक कुरीतियों को सामने लाकर उनका विरोध करना और आदर्श परिवार एवं समाज का संदेश देना है।

`भाग्यवती,`` श्रद्धाराम फुल्लौरी,`` परीक्षा गुरु,`` लाला श्रीनिवासदास,`` नूतन ब्रह्मचारी,`` सौ अजान एक सुजान,`` बालकृष्ण भट्ट, `निस्सहाय हिन्दू,` राधाकृष्णदास `धूर्त रसिकलाल,` स्वतंत्र रमा और परतंत्र लक्ष्मी,` लज्जाराम शर्मा, ये विशेष उल्लेखनीय हैं।

इनके अतिरिक्त आयोध्यासिंह उपाध्याय, ब्रजनंदन सहाय, राजा राधिकारमण सिंह, मन्मत द्विवेदी जी ने भी उपन्यास की सेवा की है।

इस उपन्यास-साहित्य को नया मोड देने का कार्य प्रेमचंदजी ने किया है। उनके अविर्भाव के साथ ही मध्यंतर हो जाता है।

इस काल के उपन्यास-साहित्य की इति नीति शिक्षा और मनोरंजन में ही हो जाती है। उपन्यास का पद मनोरंजनकर्ता अथवा उपदेशक से कहीं ऊँचा है, इस बात से तत्कालीन साहित्यकार अपरिचित-से थे। फलस्वरूप उनमें मानों इस बात की होड-सी लगी हुई थी कि दुनिया को मनोरंजन अथवा उपदेश अधिक से अधिक कौन दे सकता है। इस बात को देखते हुए कहा जा सकता है कि उपन्यास और लोक-जीवन के बीच एक गहरी खाई विद्यमान थी, जिसके कारण उपन्यास का विकास रुका हुआ था। किन्तु यहाँ उल्लेखनीय है कि इस प्रयास की प्रेरणा बाहरी थी, भीतर न थी - अर्थात् हिन्दी उपन्यास साहित्य का सामान्य जीवन की ओर रुझान अंग्रेजी और बंगला उपन्यासों के देखा-देखी हुआ। अंग्रेजी उपन्यास साहित्य का प्रभाव, सर्व प्रथम बंगला साहित्य पर पडा, और तदुपरान्त हिन्दी पर-कुछ बंगला साहित्य से छनकर और कुछ सीधे रूप में। इस प्रभाव के फलस्वरूप, हिन्दी के उपन्यास साहित्य में भी मानव-जीवन की विविध समस्याओं को छूने का प्रयास किया जाने लगा।

हिन्दी उपन्यास के विकास का यह प्रथम चरण था जबकि इसका रूप स्थिर न हुआ था। एक ओर थी विरासत में प्राप्त ब्रजकाव्य की नायिका-भेद, नख-शिख वर्णन तथा शाब्दिक चमत्कार की रोमानी परंपरा और दूसरी ओर थी अंग्रेजी तथा बंगला साहित्य की देखा-देखी मानव जीवन का चित्रण और व्याख्या करने की नयी प्रेरणा एवं नयी साहित्यिक परम्परा। ` एक का लक्ष्य मनोरंजन और मन बहलाव था, तो दूसरी ने सामाजिक एवं नैतिक चेतना का विकास करने का लक्ष्य अपने सम्मुख रखा। `[१]

हिन्दी उपन्यास के प्रारंभिक विकास पर दूसरी परम्परा का पर्याप्त प्रभाव पड़ा, यहाँ तक कि इसी परम्परा का अनुसरण करने से इसका स्वरूप निखरा, और लोक शिक्षा अथवा लोक रंजन के प्रारंभिक लक्ष्यों से ऊपर उठकर, इसने अपने सम्मुख लोक-जीवन की व्याख्या का लक्ष्य रखना प्रारंभ किया।

निष्कर्ष :

प्रेमचंद पूर्व उपन्यासों में नैतिकता के बारे में जो विवेचन प्रस्तुत है उसके बारे में हम इतना ही कह सकते है कि तत्कालीन उपन्यास-साहित्य लोक-जीवन की व्याख्या के बजाय लोक-शिक्षा अथवा लोक-रंजन में ही रमा हुआ था। इसका मानव-जीवन से कोई खास लगाव न था।

उपन्यास और मानव जीवन की प्रारम्भिक दूरी ने जहाँ नीति शिक्षा अथवा मनोरंजन-प्रधान उपन्यास साहित्य को जन्म दिया, वहाँ दोनों के गठबंधन ने सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यासों को, तथा उपन्यास और मानव-जीवन के अन्तर्जीवन के गठबन्धन एवं घनिष्ठता ने मनोवैज्ञानिक उपन्यासों को जन्म दिया है।

---

१. सुखदेव शुक्ल, ` हिन्दी उपन्यास का विकास और नैतिकता, ` पृष्ठ ३४, कानपुर, १९६६ ई.।

उपन्यास और मानव-जीवन की घनिष्ठता का अनुसरण करते हुए उपन्यास रचना में नैतिक तत्व के समावेश में भी क्रमिक परिवर्तन हुआ है। तदनुसार हम देखते हैं कि उपन्यास के विकास के प्रथम चरण में नीति-शिक्षा प्रधान उपन्यासों के रूप में जहाँ उपन्यास-रचना पर नैतिकता छाई हुई है, वहाँ दूसरे चरण के सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यासों में नैतिक चेतना का, तथा इस चरण के विकास के तीसरे चरण के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में नैतिक संघर्ष का स्वर प्रधान है।

ब) प्रेमचंद युगीन उपन्यासों में अभिव्यक्त नैतिकता का स्वरूप

हिन्दी कथा-साहित्य के क्षेत्र में युगांतर उपस्थित करनेवाले प्रेमचंदजी उपन्यास के क्षेत्र में अपने ' सेवासदन ' उपन्यास को लेकर आ जाते हैं।

प्रेमचंद के आगमन के साथ ही जीवन से दूर कल्पना और जादू के आश्चर्य लोक में विचरण करनेवाला उपन्यास यथार्थ जीवन की गहराई में उतरने लगा। प्रेमचंदजी के पूर्व उपन्यास का कथानक राजा-रानियों, और सेठ-साहुकारों की चहार-दीवारी में बंद था। वह अब जन-साधारण की भाव-भूमि पर विचरन करने लगा। इसका मतलब यह नहीं कि प्रेमचंदजी के उपन्यास अपने पूर्ववर्ती उपन्यासों से सर्वथा अलग है। प्रेमचंदजी के पूर्व भी सोद्देश्य उपन्यासों की परंपरा थी। उन्नीसवीं शताब्दी के उपन्यास-लेखकों ने देश का भावी सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक मार्ग प्रशस्त करने की अपने युग के अनुसार चेष्टा की। नवीन पाश्चात्य शिक्षा के अपने दोष थे। किंतु उस शिक्षा से कुछ लाभ भी हुआ, इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता। एक लाभ था वैज्ञानिक दृष्टि

का विकास। वैज्ञानिक दृष्टि से प्रेरित होकर उन्नीसवीं शताब्दी के उपन्यास लेखकों ने मध्ययुगीन पौराणिकता और तज्जनित कुरीतियों और कुप्रथाओं का उन्मूलन कर व्यक्तिगत एवं सामूहिक चरित्र की दृढ आधार-शिल्प पर राष्ट्र की नींव स्थापित करनी चाही। प्रेमचंद कम से कम अपनी प्रारंभिक रचनाओं में `प्रतिज्ञा,`` वरदान,`` सेवासदन,` और ` निर्मला ` में उन्नीसवी शताब्दी के उपन्यास लेखकों की परंपरा की एक जाज्वल्यमान कडी के रूप में थे। तथापि यह स्मरण में रखना होगा कि इन उपन्यासों में भी प्रेमचंदजी का दृष्टिकोण उन्नीसवीं शताब्दी के लेखकों भी अपेक्षा अधिक गहराई लिए हुए है।

शीघ्र ही प्रेमचंदजी ने कला की दृष्टि से अपनी मौलिकता प्रकट की और कथा-संघटन, चरित्र-चित्रण, कथोपकथन आदि की दृष्टि से अपने पूर्ववर्ति उपन्यासकारों को पीछे छोड दिया।

प्रेमचंद का सर्वप्रथम प्रसिध्द उपन्यास सेवासदन है। इस उपन्यास में प्रेमचंद ने नारी समस्या उठाई है। इस उपन्यास की नायिका ` सुमन ` को किस प्रकार वेश्या-जीवन बिताना पडता है इसीका सहृदयतापूर्ण चित्रण इसमें हुआ है। उसके माध्यम से भारतीय नारी की निस्सहायवस्था, पराधीनता और पशुओं जैसी स्थिति पर उन्होंने प्रकाश डाला है। साथ ही समाज के धर्माचार्यों, मठाधीशों, धनपतियों, सुधारकों आदि के आडम्बर दंभ ढोंग तथा चरित्रहीनता, दहेज-प्रथा, अनमेल विवाह, पुलीस की घुसखोरी, वेश्यागमन, हिन्दू समाज की कथनी और करनी में अंतर और उसका खोखलायपन, विवाह के धन का अपव्यय, हिन्दू-मुस्लिम सांप्रदायिकता, म्युनसिपैलिटी के कारनामें, अधिकार-मोग, भारत की दरिद्रता आदि को भी उन्होंने अपना लक्ष्य बनाया है।

यह एक समाज सुधारवादी उपन्यास है। उपन्यास की कथा को अंतिम भाग में लेखक ने ` सेवासदन ` के रूप में एक आश्रम की स्थापना की है जो उपन्यास में उठाई गई प्रधान समस्या, वेश्या-समस्या का निदान है।

` प्रेमाश्रम ` प्रेमचंदजी का सर्वप्रथम उपन्यास है, जिस में उन्होंने नागरिक जीवन और ग्रामीण जीवन का संपर्क स्थापित किया है और जिसमें वे परिवार के सीमित क्षेत्र से बाहर सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में पदार्पण करते हैं। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की प्रथम झाँकी और भावनागत राम-राज्य की स्थापना का स्वप्न ` प्रेमाश्रम ` की अपनी विशेषता है। उसका उद्देश्य है - ` साम्य-सिध्दान्त `। इसमें जमींदार और किसानों का संघर्ष दिखाया गया है। जमींदारों के साथ उनके कारिन्दों, वकीलों, पुलीस अफसरों और डॉक्टरों के निरीह जनता पर अत्याचारों का भी प्रभावशाली वर्णन किया गया है। ` सेवासदन ` की अपेक्षा यह उपन्यास अधिक व्यापक है।

` निर्मला ` में अनमेल विवाह और दहेज प्रथा की दुखांत कहानी है। उपन्यास के अंत में निर्मला की मृत्यु इस कुत्सित सामाजिक प्रथा को मिटा डालने के लिए एक भारी चुनौती है। आकस्मिक रूप से घटित होनेवाली कुछ घटनाओं को छोडकर ` निर्मला ` के कथानक का विकास सीधे-सरल ढंग से होता है। प्रासंगिक कथाओं के कारण उसमें दुरूहता उत्पन्न नहीं हुई है। कथानक में कसावट है।

` रंगभूमि ` को स्वयं प्रेमचंदजी अपना सर्वोत्तम उपन्यास कहा करते थे। इस उपन्यास में कथा-क्षेत्र का अपरिमित विस्तार मिलता है। हिन्दी उपन्यास में गांधीवादी दर्शन और नीति प्रवर्तन की दृष्टि से इस उपन्यास का असाधारण महत्त्व है।

` रंगभूमि ` में जीवन के प्रति प्रेमचंद का दृष्टिकोण अत्यंत उदात्त है। उपन्यास के नाम में ही उनका दृष्टिकोण छिपा हुआ है।

जीवन क्रीडाक्षेत्र है, रंगभूमि है। वहाँ हरएक व्यक्ति खेल खेलने आया है किन्तु खेल खेलते समय " क्यों धरम-नीति को तोडे ? " संसार में प्राय: लोग खेल खेल की तरह नहीं खेलते, धांधली करते हैं, प्रेमचंद का कहना है कि भले ही दृष्टि जीत पर रहे, पर हार से कोई घबरायें नहीं, ईमान न छोडे। यही सत्पथ है, कीर्ति का मार्ग है।

सूरदास और जॉनसेवक दोनों ने अपना अपना खेल खेला। सूरदास ने सच्चे अर्थ में जीवन को रंगभूमि समझा। भौतिक दृष्टि से हारकर भी वह आत्मिक दृष्टि से सुखी था। उनके मन में कभी मैल न आया। जीता तो प्रसन्न, हारा तो प्रसन्न। खेल में सदैव नीति का पालन किया। प्रतिद्वंद्वी पर कभी छिपकर चोट नहीं की। सूरदास दीनहीन था किंतु उसमें आत्मबल था। हृदय धैर्य, क्षमा, सत्य और साहस का अगाध भांडार था। देह पर मांस नहीं था पर हृदय में विनय, शील और सहानुभूति भरी हुई थी। इसके विपरीत जानसेवक ने जीवन को संसार को संग्राम क्षेत्र समझा, समरभूमि समझा और इसिलिए, छल, कपट और गुप्त आघात आदि सभी साधनों का आश्रय ग्रहण किया। भौतिक दृष्टि से विजयी होने पर भी वह आत्म-ग्लानि से पिडित रहा। सूरदास के रूप में प्रेमचंद ने जिस पात्र की सृष्टि की है वह पात्र बहुत प्रभावशाली बन पडा है।

नौकरशाही और पूँजीवाद तथा देशी राज्यों के साथ जनवाद का संघर्ष करना उपन्यास का प्रधान उद्देश्य है। अन्य अनेकानेक सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक समस्याओं का भी चित्रण हुआ है। प्रेमचंद के प्रिय आदर्शवाद का भी इसमें गहरा रंग है। राजा से लेकर भिखारी तक प्रत्येक वर्ग की आवाज इस उपन्यास में मिलेगी। व्यापक धरातल पर जीवन को देखने के कारण इस उपन्यास की कथावस्तु स्वभावत: शिथिल हो गयी है।

` कायाकल्प ` प्रेमचंद का एक नवीन प्रयोगशील किन्तु शिथिल उपन्यास है ।

` प्रतिज्ञा ` में विधवा-विवाह की समस्या है । कला की दृष्टि से यह उत्कृष्ट कोटि की रचना नहीं है ।

` गबन ` में प्रेमचंदजी ने मध्यमवर्गीय जीवन और मनोवृत्ति का जितना सफल चित्रण किया है, उतना उनके साहित्य में अन्यत्र नहीं मिलता । औपन्यासिक कला की दृष्टि से भी यह उनकी एक सुंदर रचना है ।

` कर्मभूमि ` उनकी अन्य उचनाओं के समान अपने नामकरण को सार्थक करती है । धनवान पिता समरकान्त का एकमेव पुत्र अमरकान्त भोग और ऐश्वर्य के जीवन पर लात मारकर सेवा एवं त्याग पूर्ण सार्वजनिक जीवन की कर्मभूमि में प्रवेश करता है ।

गोदान -

` गोदान ` प्रेमचंद का अंतिम और सबसे प्रसिध्द उपन्यास है । हिन्दी उपन्यासों में ` गोदान ` कृषक जीवन का महाकाव्य माना जाता है । आधुनिक हिन्दी उपन्यास का प्रारंभ भी ` गोदान ` से ही माना जाता है ।

इस उपन्यास का नायक ` होरी ` है । जो भारत के किसानों का एक प्रतिनिधि है, ग्रामीणों का प्रतिनिधि है । भारत की समस्याएँ एक प्रकार से ग्रामीणों की ही समस्याएँ हैं । ग्रामीण क्षेत्र में छुआछुत, ऋण, धर्म व्यवस्था, जमींदारी प्रथा, पारस्पारिक वैमनस्य, ईर्ष्या, द्वेष, पुलीस तथा शासन का अत्याचार, झूठी मुकदमेबाजी, बेगार, घूस, बहु-विवाह, अनमेल विवाह, अकाल, महावृष्टि, एक या दो, गाँवों मे तो समस्याओं की सीमा नहीं हैं । इन समस्याओं को देखनेवाली आँखें भी प्रेमचंद की है, जिस में सारे विश्व की बारी कियों तक पहुँचने की अपूर्व क्षमता है ।

प्रेमचंदजी ने इसके पूर्व भी ' प्रेमाश्रम ' तथा ' कर्मभूमि ' में ग्रामीण समस्याओं को उठाया था । इन समस्याओं को सुलझाने के लिए उन्होंने आश्रमों की स्थापना अपने उपन्यासों में दर्शायी है, अथवा उसी प्रकार के अन्य आदर्श । ' गोदान ' तक तो वे सुधारवादी बने रहे और वर्तमान व्यवस्था में ही परिवर्तन करके उसे सुधारने का प्रयत्न करते रहे । इन प्रयत्नों का फल पात्रों और घटनाओं का आदर्श की ओर मुड जाना हुआ । ' गोदान ' में आकर वे समस्या का हल देने की व्यग्रता से छूट गये हैं । उन्होंने ' गोदान ' में होरी के माध्यम से किसान की समस्त चिंताओं और समस्याओं को मुखरता प्रदान की है । ' होरी ' के विषय में इन्द्रनाथ मदान ने कहा है कि, " किसान के रूप में होरी को ' गोदान ' के अंत में धाराशायी पाते हैं । " यह उपन्यास केवल होरी का गोदान नहीं है, प्रेमचंद की आस्था का भी गोदान है, सदनों, निकेतनों, आश्रमों में लेखक की आस्था का भी गोदान है ।"[१] ऐसे कथनों से लगता है मानो प्रेमचंदजी आस्थाहीन हो उठे हैं । परन्तु यह भ्रम मात्र है ।

इस उपन्यास में प्रेमचंदजी की आश्रमों पर से आस्था उठ गयी है । यह सत्य है कि होरी किसान के रूप में टूट जाता है यह भी सत्य है, परन्तु इसका अर्थ प्रेमचंदजी आस्थाहीन हो गये हैं ऐसा मानना सरासर गलत है । होरी टूट जाता है, पर केवल भौतिक रूप से ही । होरी का इन्सान अंततक टूटता नहीं है । इस उपन्यास का अंतिम परिणाम कारुण्णिक है । इससे आस्थाहीनता का स्वर नहीं उभरता है । अत: यह गोदान ही है तो केवल आश्रमों में प्रेमचंद की आस्था का गोदान है न कि मानव में प्रेमचंद की आस्था का गोदान है ।

---

१) इन्द्रनाथ मदान, ' गोदान : मूल्यांकन और मूल्यांकन,' पृष्ठ १७७, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, १९७१ ई ।

इस उपन्यास का अंत अत्यंत हृदयद्रावक है। भौतिक दृष्टि से होरी भले ही पराजित हो गया हो, लेकिन मन से वह प्रसन्न था। उसमें पुलक और गर्व था। उसके टूटे-फूटे अस्त्र उसकी विजय-पताकाएँ थीं। मजदूरी करते हुए उसे एक दिन लू लग गयी, उसकी मृत्यु के दिन आ गये। गाय की लालसा पूर्ण न हो सकी। धनिया की आँखों से आँसू बहने लगे। हीरा ने रोते हुए कहा - " भाभी, दिल कड़ा करो, गोदान करा दो, दादा चले। धनिया उस दिन सुतली बेचकर बीस आने लायी थी। पति के ठण्डे हाथ में रखकर बोली - महाराज, घर में न गाय है न बछिया, न पैसा। ये पैसे हैं, यही इनका गोदान है।"[१]

इस उपन्यास में प्रेमचंद का जीवन संचित अनुभव और उनकी कला का बिखरा हुआ रूप मिलता है।

' गोदान ' उपन्यास के विषय में एक विवाद का उल्लेख करना आवश्यक है। ' गोदान ' में प्रेमचंद के अन्य उपन्यासों के समान ही शहर और देहात की कथाएँ समांतर रूप से चलती हैं। नंददुलारे बाजपेयी जैसे कुछ आलोचकों ने दोनों कथाओं को एक दूसरे से असंबद्ध बताया है। उनमें वास्तविक ऐक्य की कमी है, ऐसा उनका दावा है। इस संदर्भ में डा. इन्द्रनाथ मदान जी का स्मरण हो आता है। उन्होंने भी प्रारंभ में गोदान पर ऐसाही आरोप लगाया था। बाद में उन्होंने स्वयं ही अपनी इस धारणा को गलत बताया और कहा कि यदि ' गोदान ' में से शहर की कथा हटा दें तो ' गोदान ' की व्यापकता में बहुत बड़ी त्रुटी आ जाति है। नलिन विलोचन शर्मा ने इस पार्थक्य को उपन्यास का सर्वोत्तम गुण कहा है।

---

१. प्रेमचंद, ' गोदान, ' पृष्ठ ३००, सरस्वति प्रेस, दिल्ली, इलाहाबाद, वर्तमान संस्करण, १९८४ ई.।

प्रेमचंदयुगीन अन्य उपन्यासकार :

प्रेमचंद के समकालीन उपन्यासकारों की संख्या लगभग ढाई सौ है। इस काल में जिन्होंने उपन्यास लिखना तो प्रारंभ किया परन्तु जिनकी कला-प्रतिभा का विकास आगे चलकर हुआ ऐसे भी कई उपन्यासकार है। उनका विवेचन इस स्थल पर न करते हुए आगे ही किया जाएगा।

प्रेमचंद जी की ही परंपरा में आने वाले और जिन्होंने अपनी पहचान बनायी रखी ऐसे उपन्यासकारों में सर्वप्रथम ` विश्वंभरनाथ शर्मा `` कौशिक ` जी का नाम आता है। उनके ` माँ ` और ` भिखारिणी ` उनके विख्यात उपन्यास हैं। वे कथाकार भी हैं। उन्होंने प्रेमचंदजी का सफल अनुकरण किया है, पर संभवत: इसी कारण लिखने की योग्यता होते हुए भी वे अपनी अलग पहचान बना नहीं पाये। उनमें आदर्शोन्मुख यथार्थवाद ही है। अन्य उपन्यासकारों में ` प्रतापनारायण श्रीवास्तव ` जी का नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने सामाजिक, राजनीतिक एवं ऐतिहासिक विषयों एवं समस्याओं को अपने उपन्यासों में सफलतापूर्वक अंकित किया है। इनकी भाषा निखरी हुई और शैली प्रौढ है। ` चतुरसेन शास्त्री ` के भी कुछ उपन्यास इस काल में सामने आये परन्तु उनका विवेचन बाद में ही करना उचित है।

प्रेमचंद-युग के सबसे अक्खड और इसलिए सबसे बदनाम उपन्यासकार हैं ` बेचैन शर्मा ` ` उग्र `। गद्य के शैलीकारों में उनका महत्वपूर्ण स्थान है। ` उग्र ` के पास यथार्थ की अनुभूति बडी तीव्र है। जीवन की तिक्तताओं और कटुताओं का आजीवन साक्षी होने के नाते ` उग्र ` जी के समस्त कृतित्व पर उसका प्रभाव है। शैली की दृष्टि से ` उग्र ` के लेखों, रचनाओं और कृतियों में जीवन की परिस्थितीयों के प्रति तीव्र कटाक्ष, कटु आक्रमण, और विरोध स्पष्ट झलकता है। ` उग्र ` के पास यथार्थ और आक्रोश की भाषा के साथ-

साथ नितान्त पौरूषपूर्ण शैली भी है। उनके ` चाकलेट ` उपन्यास की कुछ लोगों ने गांधीजी के पास बडी निंदा की। पुस्तक पढने पर गांधीजी मौन रह गये और कहा कि कटु चाहे जितना हो सत्य तो है ही। इससे उनका साहसपूर्ण तथा निर्भीक दृष्टि व्यक्त होती है। जिस युग में ` उग्र ` जी थे वह ` आदर्शवाद ` का युग था। फलत: वे बदनाम हुए। ` चन्द हसीनों के खतूत,` ` दिल्ली का दलाल,`` बुधुआ की बेटी,` ` शराबी ` आदि उनके विख्यात उपन्यास हैं। ` चंद हसीनों के खतूत ` पत्रात्मक शैली में लिखा गया हिन्दी का प्रथम उपन्यास है। कुछ भी हो, ` उग्र ` जी को हिन्दी उपन्यास साहित्य का विवेचन करते हुए विस्मृत करना संभव नहीं है।

` ऋषभचरण जैन ` भी ` उग्र ` जी की परंपरा के ही उपन्यासकार हैं।

` प्रसाद जी ने ` तितली,` ` कंकाल और ` इरावती ` (अपूर्ण) उपन्यास लिखे हैं। ` तितली ` और ` कंकाल ` में उनका दृष्टिकोण यथार्थपरक हैं। ` इरावती ` ऐतिहासिक उपन्यास है। ` कंकाल ` और ` तितली ` इन दोन उपन्यासों में उन्होंने समाज की नैतिक दुरवस्था के साथ-साथ समाज के उत्थान की भावी रूपरेखा का चित्र खींचते हुए, समाज के विगलित और मुखरित, दोनों रूप प्रस्तुत किये है।`[१] प्रतिभा-संपन्न लेखक होते हुए भी वे हिन्दी उपन्यास को कोई नया आयाम नहीं दे सके।

उपन्यास साहित्य के क्षेत्र में ` निराला ` जी ने ` अप्सरा,` ` अलका,`` प्रभावती,` ये स्वच्छंदतावादी पध्दति के प्रेममूलक उपन्यास लिखे हैं। ये उनकी कवि चेतना से प्रभावित हैं।

---

१. सुखदेव शुक्ल,` हिन्दी उपन्यास का विकास और नैतिकता,` पृष्ठ ३७, कानपुर, सितम्बर, १९६६

' सियारामशरण गुप्त ' जी के ' गोद,'' अंतिम आकांक्षा,' ' नारी,' उल्लेखनीय उपन्यास हैं ।

' भगवतीप्रसाद वाजपेयी ' जी भी प्रेमचंद की औपन्यासिक परंपरा को बढानेवाले उपन्यासकार हैं । उन्होंने ' प्रेमपथ,'' मीठी चुटकी,' ' अनाथ पत्नी,'' त्यागमयी,'' लालिमा,' आदि अपने उपन्यासों में मध्यमवर्गीय पारिवारिक सामाजिक जीवन का मनोविश्लेषणपरक चित्रण किया है ।

उनकी दृष्टि में मानवतावाद की प्रधानता है । वैयक्तिकता को अपनाते हुए भी उन्होंने सामाजिकता का ह्रास नहीं होने दिया है ।

' वृंदावनलाल वर्मा ' ने इसी काल में लिखना प्रारंभ किया परन्तु उनकी प्रतिभा का वास्तविक विकास आगे के काल में ही हुआ है ।

' वृंदावनलाल वर्मा ' ने यद्यपि सामाजिक उपन्यास लिखे हैं फिर भी उनकी ख्याति उनके ऐतिहासिक उपन्यासों के कारण ही है । वे हिन्दी के पहले ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं । जिनकी रचनाओं में इतिहास और साहित्य का मणि-कंचन योग हुआ हैं ।

' विराटा की पद्मिनी,'' झाँसी की रानी,'' मृगनयनी,' ' अहिल्याबाई,'' माधोजी सिंधिया,'' भुवन विक्रम ' उनके विख्यात ऐतिहासिक उपन्यास हैं ।

उनके प्रारंभिक उपन्यास बुंदेलखंड के इतिहास से संबध्द है । ' झाँसी की रानी ' उपन्यास में उन्होंने सर्व प्रथम इस सीमा को लाँघकर राष्ट्रीय पृष्ठभूमि को अपनाया है ।

झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई स्वतंत्रता के लिए लडी थी, उसका शौर्य विवशता से उत्पन्न नहीं हुआ था परन्तु वह जन्मजात था, यह दिखलाना इस

उपन्यास का प्रधान उद्देश्य है, जिस में लेखक को पर्याप्त सफलता मिली है। 'माधवजी सिंधिया', 'टूटे काँटे,' और 'अहिल्याबाई' इन रचनाओं के माध्यम से उन्होंने मध्य-युग की एक लंबी अवधि का इतिहास प्रस्तुत किया है। वर्माजी ने प्रधानत: विदेशी आक्रमण के बाद के भारतीय इतिहास को ही अपने उपन्यासों का विषय बनाया है। केवल 'भुवन विक्रम' ही उनकी एक ऐसी रचना है जो वैदिक युग को मूर्त करती है।

परवर्ती उपन्यासों में 'मृगनयनी' उनका सर्वश्रेष्ठ उपन्यास माना जाता है। उपन्यासकार ने ग्वालियर के महाराजा मानसिंह और ग्रामीण मृगनयनी के प्रणय-रोमान्स को चित्रित किया है। इसी के साथ-साथ लाखी और अटल की उपकथा भी चलती है। इस उपकथा के माध्यम से उस समय के संघर्षमय जनजीवन को, युग की मान्यताओं और विश्वासों को तथा समाज के रीति-रिवाजों को मूर्त किया है। कभी-कभी लाखी और अटल के एकनिष्ठ प्रेम और कर्तव्य भावना के समक्ष मृगनयनी और मानसिंह के चरित्र भी फीके पड़ने लगते हैं। इस उपन्यास की सबसे बड़ी शक्ति है मृगनयनी का चरित्र। मृगनयनी में सौंदर्य और साहस का अपूर्व योग है जिसके बल पर वह देखते देखते साधारण गुर्जर कन्या निन्नी से रानी मृगनयनी बन जाती है। इस उपन्यास में तत्कालीन धर्म, राजनीति, चित्रकला, संगीतकला, और वास्तुकला को इनके ब्यौरों और अंतर्विरोधों सहित इस रूप में चित्रित किया गया है कि यह उपन्यास सांस्कृतिक उपलब्धि बन गया है।

प्रेमचंद से वृंदावनलाल वर्मा तक हिन्दी उपन्यास के विकास को एक विहंगम दृष्टि से देखने पर, हमें इस विकास की दो प्रवृत्तियाँ – सामाजिक एवं ऐतिहासिक, दिखाई देती हैं। किन्तु इन प्रवृत्तियों के मूल में एक ही भाव काम कर रहा है – मानव-जीवन के साथ उपन्यासकार की अधिकाधिक घनिष्ठता एवं

उपन्यास के माध्यम से मानव-जीवन की आलोचना तथा व्याख्या का प्रयास, " मानव-जीवन की वर्तमान अवस्था पर अधिक ध्यान देने, इसकी समस्याओं एवं जटिलताओं को समझाने एवं सुलझाने के प्रयास के कारण सामाजिक उपन्यासों का जन्म हुआ। किन्तु जब उपन्यासकार ने ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं ऐतिहासिक दृष्टिकोण की सहायता से मानव की वर्तमान अवस्था के विश्लेषण का प्रयास किया, तो इसका परिणाम ऐतिहासिक उपन्यासों के सृजन में प्रकट हुआ। "[१] इस प्रकार, सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यासों के लक्ष्य समान हैं। अंतर यदि है तो केवल वर्तमान और अतीत की छाप का।

निष्कर्ष :

प्रेमचंद ने अपने साहित्य में सामाजिक नैतिकता का उद्‌बोधन किया है। उन्होंने अपने उपन्यासों में जिनका चित्रण प्रस्तुत किया है वे दलित हैं तथा पीड़ित हैं और वंचित हैं। प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों में पीड़ित और दलित मानवता की वकालत को प्रमुख स्थान दिया है। पीड़ित में उन्होंने नारी जाति, अछूत और किसान दिखायी दिये, इसलिए प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों के जो विषय चुने हैं वे इन्हीं के कष्टमय जीवन के बारे में हैं। इस प्रकार ऐसे विषयों को चुनकर प्रेमचंद वस्तुत: पीड़ितों के कष्टों के प्रति शोषक समाज में नैतिक सम्वेदना उत्पन्न करना चाहते थे। समाज के इन पीड़ित अंगों के प्रति जन-साधारण में उपेक्षा का भाव व्याप्त था। जो कि समाज में नैतिक चेतना के अभाव का द्योतक था। अत: समाज के इन पीड़ित अंगों के प्रति चेतना एवं सम्वेदना उत्पन्न करके प्रेमचंद ने समाज की नैतिकता का उद्‌बोधन किया। उन्होंने पीड़ितों की दुर्दशा को अपने उपन्यासों का विषय बनाकर समाज की नैतिकता को चुनौती दी और उनके प्रति समाज में सहानुभूति एवं नैतिक सम्वेदना का भाव उत्पन्न किया।

---

१. सुखदेव शुक्ल, "हिन्दी उपन्यास का विकास और नैतिकता," पृष्ठ ३९, कानपुर, सितम्बर १९६६ ई.।

प्रेमचंद युगीन अन्य उपन्यासकारों ने भी अपना महत्व सिध्द करने के लिए उपन्यास लिखे हैं। उनमें प्रमुख है - ` विश्वंभरनाथ शर्मा,` कौशिक,` उन्होंने प्रेमचंद का सफल अनुकरण किया है। उनमें आदर्शोन्मुख यथार्थवाद ही है। दूसरे उपन्यासकार है ` प्रतापनारायण श्रीवास्तव ` उन्होंने सामाजिक राजनीतिक एवं ऐतिहासिक विषयों एवं समस्याको अपने उपन्यासों में लिया है। आपने अपनी कृतियों मे जीवन की परिस्थितियों के प्रति तीव्र कटाक्ष, कटु आक्रमण और विरोध स्पष्ट झलकता है। इन्हीं की परंपारक के एक और उपन्यासकार है ` ऋषभचरण जैन `। उनके बाद प्रसाद अपने ` तितली,`` कंकाल,` ` इरावती `(अपूर्ण) लेकर उपस्थित होते हैं। ` तितली,`` कंकाल ` में उनका दृष्टिकोण यथार्थ परक है। साथ ही साथ इन दो उपन्यासों में उन्होंने समाज की नैतिक दुरवस्था का चित्रण किया है। ` भगवतीप्रसाद वाजपेयी ` जी भी प्रेमचंद की औपन्यासिक परंपरा को बढानेवाले उपन्यासकार हैं। ` प्रेमपथ,` ` त्यागमयी ` आदि रचनाएँ प्रस्तुत की। आपने मध्यमवर्गीय पारिवारिक, सामाजिक जीवन का मनोविश्लेषणपरक चित्रण किया है। ` वृंदावनलाल वर्मा ` ने यद्यपि सामाजिक उपन्यास लिखे हैं फिर भी उनकी ख्याति उनके ऐतिहासिक उपन्यासों के कारण ही है। ` विराटा की पद्मिनी,`` झाँसी की रानी,` ` मृगनयनी,` आदि उनके विख्यात ऐतिहासिक उपन्यास है।

अंत में हम इतना कह सकते है कि प्रेमचंद तथा प्रेमचंद युगिन अन्य उपन्यासकारों ने सामाजिक तथा ऐतिहासिक उपन्यास की रचना की। प्रमुखता समाज तथा समाज के बहिर्जगत को अधिक महत्व था। परन्तु समाज से व्यक्ति की तरफ ध्यान प्रथम हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों का गया। जिनमे प्रमुख थे जैनेंद्र कुमार, इलाचंद्र जोशी आदि। हमारा अगला विवेचन जैनेंद्र कुमार के औपन्यासिक कृतियों पर आधारित है। उन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम

से समाज से अपना ध्यान हटाकर व्यक्ति की ओर किया । और व्यक्ति के अंतरंग में उठनेवाली हर एक व्यथा का उद्घाटन कर के उसके अंतस्थल तक पहुँचने का प्रयास किया है । और समाज में व्याप्त नैतिकता को धक्का देने का प्रयास किया है । उसका विवेचन अगले अध्याय में विस्तृत रूप से किया है ।